International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 383-385

आधुनिक युग में सर्वधर्म : सद्भाव

डॉ. शिखा श्रीवास्तव

दर्शनशाश्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रस्तावना

विश्व मे अनेक धर्मो और संप्रदायों के लोग रहते हैं। हिन्दू, मुसिलम, सिख, ईसाई आदि विभिन्न धर्मों के लोग भिन्न-भिन्न धर्म में आस्था रखते हैं। सभी धर्मों में थोड़ी बहुत समानता के साथ - साथ कुछ विरोध भी दिखाई पड़ते है; जिससे धर्मों के अनुयायियों के बीच संघर्ष और मतभेद होता रहता है। यहां तक हम देखते हैं एक ही धर्म के अनुयायियों के बीच भी सिद्धांतो और धार्मिक विश्वासों के कारण मतभेद उत्पन्न हो जाता है।यह एक सार्वभौम समस्या बन गई है, जो मानव जाति के लिये उपयुक्त नही है।इसी कलह और मतभेद के कारण अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न होती है। ये समस्यायें सामाजिक अव्यवस्था उत्पन्न करती है।सम्पूर्ण मानवजाति में प्रेम और भाईचारा बढ़ाने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों के बीच होने वाले कलह को समाप्त किया जाय तथा मेरा ही 'धर्म' श्रेष्ठ है, इस भावना को दूर किया जाये।

आज वैश्विक स्तर पर धार्मिक कलह बढ़ता जा रहा है। प्राचीन काल से ही धर्म और जाति के नाम पर हिंसा और रक्तपात हो रहा है। धर्म एक तरफ तो अपने अनुयायियों के बीच प्रेम और भाईचारा बढ़ाता है;जबकि दूसरे धर्मानुयायियों के बीच घृणा और द्वेष भी फैलाता है[1]। स्वामी विवेकानंद के शब्दो में "जितना धर्म ने मनुष्यों के बीच भ्रातृत्व की भावना को विकसित किया है उतना किसी अन्य ने नही किया, धर्म ने मानव- मानव के बीच जितनी कटुता एवं वैमनस्यता पैदा की है उतना किसी अन्य ने नही किया है। धर्म ने मनुष्य के लिये धर्मार्थ अस्पताल बनवाये हैं, मनुष्यों तथा पशुओं के लिये आधुनिक अस्पताल का निर्माण कराया है और धर्म ने ही विश्व को रक्त रंजित भी किया है|"[2] अतः धर्म ही दूसरे धर्म का विरोधी भी है।

वर्तमान में सामाजिक समस्यायें देखते हुये 'सर्वधर्म समन्वय' की अत्यधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। 'सर्वधर्म समन्वय' का अर्थ है कि सभी धर्मों के बीच मतभेद को दूर करके एकता एवं सामंजस्य की स्थापना करना । विश्व में प्रचलित सभी प्रकार के धर्मो में कुछ ऐसे सामान्य तत्व होते ही है जिनके आधार पर उनके बीच सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। प्रश्न यह उठता है कि क्या ऐसे " सार्वभौम धर्म " की स्थापना की जा सकती है जिसे सभी धर्मों के अनुयायी स्वीकार कर सकें? क्या ऐसा संभव नही है कि विभिन्न धर्मों के बीच अंतर्व्याप्त घृणा एंव विद्वेष को न्यूनतम करके उन्हें परस्पर एकता और सामंजस्य के सूत्र में बांधा जा सके।[3] विस्तार से विचार करने पर हमारे समक्ष चार प्रकार के विकल्प उपस्थित होते हैं ।प्रथम विकल्प के रूप में यह है कि विश्व में प्रचलित अनेक धर्मो में से किसी एक ही धर्म को सार्वभौम धर्म की मान्यता दी जाये। दूसरे विकल्प के अनुसार सभी धर्मों में प्रचलित सामान्य मूल तत्व को ग्रहण करके उसके आधार पर एक नवीन धर्म की स्थापना की जाये।तीसरे विकल्प के रूप में हम यह मान सकते है कि सभी धर्मो से पृथक एक नवीन सार्वभौम धर्म की स्थापना करना। चौथा विकल्प हमारे समक्ष यह उपस्थित हो जाता है कि धार्मिक बहुलवाद को ही स्वीकार किया जाये।

सर्वप्रथम हम प्रथम विकल्प पर विचार करते है कि विश्व में प्रचलित अनेक धर्मो में से क्या किसी एक धर्म को सार्वभौम धर्म के रूप में मान्यता दी जा सकती है ? "सार्वभौम धर्म " का तात्पर्य यही है कि जिसके सिद्धात, विश्वासों, नैतिक मूल्यों, उपासना पद्धति तथा कर्मकाण्ड को विश्व के सभी धर्मपरायण व्यक्ति अपनी इच्छा से स्वीकार करें । जब हम विश्व में प्रचलित धर्मो में से किसी एक धर्म को "सावभौम धर्म "के रूप में अपनाना चाहते हैं तब हम देखते हैं कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों के बीच मतभेद होता है । सभी धर्मानुयायी अपने -अपने धर्मो को ही श्रेष्ठ मानते हैं । हिन्दू धर्म का अनुयायी हिन्दू धर्म को सार्वभौम धर्म बनाने, इसाई अपने धर्म को, मुस्लिम अपने धर्म को सार्वभौम बनाने की बात करता है। इसाई धर्मानुयायी एन.एफ.एस.फरे के अनुसार- "[4]मै समझता हूं कि मानव के इतिहास में जीसस का जीवन, उनका उपदेश, मृत्यु और पुनर्जीवन है। ईश्वर का प्रेम ही सच्चा प्रेम है जिसे ईसा ने अपने जीवन में अपनाया तथा जिसकी उन्होने शिक्षा दी, मुझे ऐसी कोई भी वस्तु प्रतीत नही होती है जो इस सर्वसमावेशी, निरूपाधिक तथा शाश्वत प्रेम की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है जिसका की जीसस के जीवन एवं उपदेशों में निश्चित रूप से संकेत मिलता है।"

जार्ज गैलोव भी इसाई धर्म को ही श्रेष्ठ बताते हुये कहते है कि - "[5]अन्य धर्मो की अपेक्षा इसाई धर्म ही पुनःस्थापना एवं विकास की शक्ति रखता है। इसाई धर्म की आंतरिक महानता विकास की क्षमता के द्वारा ही प्रकट होता है, जिसके द्वारा वह मानवता के प्रगामी जीवन के साथ विकसित होता है और अपने संस्थापक की भावना के अनुरूप निरन्तर विकसित एवं निरन्तर परिवर्तित विश्व की आवश्यकताओ की पूर्ति में सहायक होता है। यथार्थतः सार्वभौम धर्म केवल वही धर्म हो सकता है जो विकसित होता है।"

इसी तरह से डब्ल्यू.ई. हॉकिंग भी अपने इसाई मत का समर्थन करते हुये कहते हैं-"[6]यह सार्वभौम धर्म होने के रास्ते पर है, यह आधुनिकता के पाश्चात्य परीक्षणों में सफल हो चुका है और आगामी सभ्यताओं की धार्मिक समस्याओं के समन्वय में निश्चित रूप से नेतृत्व प्रदान करेगा।"

फ्रेडिक हीलर भी इसाई धर्म को ही सार्वभौम धर्म के रूप में अपनाने पर बल देते हैं।उनका मत है कि इस धर्म में वे सभी तत्व विद्यमान है जो सार्वभौम धर्म के लिये अनिवार्य माने जाते हैं।उनके अनुसार यह धर्म अन्य धर्मों की अपेक्षा उस अर्थ में अधिक उत्कृष्ट है जिस अर्थ में प्लेटो को अरस्तू की अपेक्षा और सबसे बड़े भाई को अन्य भाइयों की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट माना जाता है।[7]

इसी तरह से हिन्दू धर्मानुयायी अपने हिन्दू-धर्म को सार्वभौम धर्म मानने पर जोर देते हैं। डा. राधाकृष्ण के अनुसार हिन्दू धर्म विशेषतः अद्धैत वेदांत ही सार्वभौम धर्म बन सकता है। उनके अनुसार "[8]हिन्दू धर्म किसी एक पंथ या

किसी एक धर्म-ग्रन्थ, एक पैगम्बर या एक संस्थापक से जुड़ा हुआ नहीं है, अपितु यह चिर नवीन अनुभवों के आधार पर सत्य की निरंतर खोज है | हिन्दू धर्म ईश्वर के सतत विकास के सम्बन्ध में एक मानवीय विचार है |" उनके अनुसार - " [9]वेदांत ही सम्पूर्ण मानव जाति के लिए महत्तम एवं सर्वार्धिक महत्त्वपूर्ण धर्म है|" इसी तरह विवेकानंद जी ने हिन्दू धर्म को श्रेष्ठ मानते हुए कहा है कि- "[10] मुझे एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने का गर्व है जिससे सम्पूर्ण विश्व को सहिष्णुता एवं सार्वभौमिक स्वीकृति की शिक्षा प्रदान की है |"

इस तरह से हम देखते हैं कि विभिन्न धर्म अपने ही धर्म को श्रेष्ठ बताने का प्रयास करते हैं| इससे सार्वभौम धर्म की स्थापना के स्थान पर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी | कोई भी धर्म संसार के सभी मनुष्यों की भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ती नहीं कर सकता है, क्योंकि उनकी संस्कृति, विचार, परम्पराओं, मान्यताओं एवं विश्वासों में मूलभूत अंतर होता है | निष्कर्षतः हम विश्व में प्रचलित अनेक धर्मों में से किसी एक धर्म को सार्वभौम धर्म नहीं बना सकते हैं |

हमने देखा कि किसी एक धर्म को सार्वभौम धर्म मानने में अत्यधिक विवाद है | अब हम दूसरे विकल्प पर विचार करते हैं कि क्या विश्व में प्रचलित सभी धर्मों के सारतत्व को लेकर किसी ऐसे पृथक धर्म को बनाया जा सकता है जिसमे सबकी सहमति हो ? डॉ. भगवान दास, डॉ.राधाकृष्नन,स्वामी विवेकानंद आदि इस मत से पूरी तरह सहमत है | इस मत का समर्थन करते हुए डॉ. भगवान् दास कहते हैं कि "[11] सर्व धर्म समभाव की स्थापना किसी विशेष धर्म के आधार पर नहीं हो सकती है | इसके लिए यह अनिवार्य है कि सर्वप्रथम विभिन्न धर्मो के मूल तत्त्वों को उनके आकस्मिक तत्त्वों से पृथक किया जाए तत्पश्चात आवश्यक तत्त्वों को लेकर सर्वधर्म समभाव की स्थापना की जाए |"

सभी धर्मों के मूल तत्त्व वे हैं जिन पर सबकी सहमति होती है न कि किसी व्यक्ति विशेष की इच्छा पर आधारित होता है | सभी धर्मों के आधारभूत तत्त्व का सम्बन्ध किसी व्यक्ति, जाति या या गुरु विशेष से सम्बंधित नहीं होता है | सभी धर्मो का आधारभूत तत्त्व तो एक ही है बस विभिन्न धर्म भिन्न - भिन्न रूपों में इसका वर्णन करते हैं | भगवान् दास के अनुसार - "[12] सत्य सार्वभौमिक होता है तथा इस एक जाति या गुरु का विशेषाधिकार नहीं होता है, यह देश, काल, तथा परिश्थितियो के अनुसार परिवर्तिति होता रहता है एक ही आधारभूत सत्य ईश्वर के द्वारा विभिन्न धर्म ग्रंथों के माध्यम से भिन्न - भिन्न भाषाओँ में तथा भिन्न - भिन्न व्यक्तियों के द्वारा जो विभिन्न राष्ट्रों में जन्म लेते हैं, प्रकट रहता है |" महात्मा गांधी भी इस मत का समर्थन करते हुए कहते हैं कि - "[13]जिस प्रकार किसी वृक्ष में एक ही तना के होते हुए भी उसकी शाखाएं भिन्न - भिन्न होती हैं, उसी प्रकार विभिन्न धर्म एक ही वृक्ष की विभिन्न पत्तियां एवं शाखाएं हैं | जैसे विभिन्न आकार, रंग और नश्ल की विभिन्न गायों के दूध का रंग सफ़ेद ही होता है उसी तरह से व्यवहारिक रूप से विविधता रखते हुए सभी धर्म परमार्थतः एक ही हैं |

विभिन्न धर्मों पर विचार करने से हम यह देख सकते हैं कि सभी धर्म दया,प्रेम, करुणा, उदारता, सहिष्णुता की शिक्षा प्रदान करते हैं | विभिन्न धर्मो का मतभेद केवल कर्मकांड को लेकर है |सभी धर्म ईश्वर की सत्ता में विश्वास करते हैं, केवल ईश्वर की प्राप्ति का मार्ग पृथक है | हिन्दू मंदिरों में जाते हैं, भजन, कीर्तन,पूजा में आस्था रखते हैं | मुस्लिम मस्जिदों में जाते हैं, रोज़ा, नमाज़ में आस्था रखते हैं | ईसाई चर्च जाते हैं और ईश्वर की प्रार्थना करते हैं | इस तरह से सभी धर्मों का एक ही उद्देश्य भावनाओं की संतुष्टि और मानसिक शान्ति प्राप्त करना है | सभी एक ही ईश्वर में आस्था रखते हैं, बस उपासना का ढंग अलग - अलग है |इस तरह से हम अनिवार्य तत्वों के आधार पर विभिन्न धर्मों में सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं |

डॉ. राधाकृष्नन के अनुसार - "[14]विभिन्न धर्मों की एकता बाह्य स्तर पर स्थापित नहीं की जा सकती है | यह एकता तो बिना किसी विशेष धार की पूर्वमान्यता के आंतरिक एवं आध्यत्मिक स्तर पर अनुभूत की जा सकती है | ईश्वर अपने सत्य, अपने प्रेम, अपनी कृपा से यथार्थतः किसी को भी वंचित नहीं करता है, चाहे वह कोई भी व्यक्ति हो या किसी भी पंथ को स्वीकार न करता हो |" जिस तरह विभिन्न नदियां भिन्न - भिन्न रास्तों से निकलकर अंत में समुद्र में मिल जाती हैं उसी तरह से उपासना और कर्मकांड के स्तर पर पृथक - पृथक होते हुए भी सभी धर्मों का लक्ष्य परमात्मा में मिलना ही है | विवेकानंद जी के शब्दों में -"[15] हम धर्मिक विचारों के विविधता को स्वीकार करते हैं क्योंकि सबका परमसाध्य एक ही है | इसे वेदांती काव्यात्मक भाषा में कहते हैं कि ' जिस प्रकार विभिन्न नदियां जिनका उदगम स्थल भिन्न - भिन्न है, सीधे या टेढ़े रास्ते से प्रवाहित होते हुए अंततः समुद्र में मिल जाती हैं उसी प्रकार विभिन्न पंथों एवं धर्मों के प्रस्थान बिंदु पृथक - पृथक होते हुए भी वे सभी सीधे या टेढ़े रास्तों से होते हुए अंततः एक ही में मिल जाते हैं |" कबीर, नानक, रैदास, नामदेव सभी यह मानते हैं कि रहस्यानुभूति के स्तर पर सारे भेद समाप्त हो जाते हैं |

हम देखते है कि सिर्फ कर्मकाण्ड के स्तर पर ही भेद दिखाई देते हैं, जबकि सबका साध्य एक ही है तो क्या सभी धर्मों के सारतत्त्वों के आधार पर सार्वभौम धर्म की स्थापना की जा सकती है ? ध्यान से देखने पर हम पाते हैं कि वास्तव में विभिन्न धर्मानुयायियों के बीच जो समस्या है वह कर्मकांड को लेकर ही है | धर्म के आवश्यक तत्त्व को लेकर कोई समस्या है ही नहीं, धर्म का वाह्य पक्ष ही मतभेद का कारण है, क्योंकि आंतरिक अनुभूति सबकी एक ही है | प्रत्येक धर्मानुयायी अपने - अपने धर्म को ही श्रेष्ठ मानता है उसके लिए उसका मार्ग ही ईश्वर तक पहुँचने का सबसे सरल मार्ग होता है और वही उसके लिए सर्वोत्तम होगा | जैसे इसे धर्म में कहा गया है कि " [16]मैं ही मार्ग, सत्य तथा जीवन हूँ, कोई भी व्यक्ति पिता के पास मेरे ही द्वारा पहुँच सकता है |" इसी प्रकार बौद्ध दर्शन में " बुद्धं शरणम् गच्छामि" कहा गया | कर्मकांड से व्यक्ति का भावनात्मक सम्बन्ध भी होता है जो जन्म और वातावरण के द्वारा हमारे अंदर आता है और हमारे व्यक्तित्त्व का महत्त्वपूर्ण भाग बा जाता है, जिसे त्यागना व्यक्ति के लिए मुश्किल हो जाता है | कर्मकांड के स्तर की समस्या को सुलझाना मुश्किल है और किसी सार्वभौम धर्म की स्थापना असंभव है |

अब हम तीसरे विकल्प पर विचार करते हैं | हम सभी धर्मों से पृथक एक ऐसे नवीन धर्म की स्थापना करें जो कर्मकांडों से पृथक 'मानव कल्याण' पर केंद्रित हो और आस्था पर आधारित न होकर विशुद्ध तर्क और बौद्धिकता पर आधारित हो | यह पूरी तरह से 'मानववादी' धर्म हो | इस तरह के 'मानववादी' धर्म को ही सार्वभौम धर्म बनाया जाए | ऐसे धर्म को अपनाने से कोई विशेष धर्म का अनुयायी यह नहीं कह पायेगा कि उसके धर्म को सार्वभौम धर्म बनाया गया है | ऐसे धर्म से वह बौद्धिक वर्ग भी संतुष्ट होगा जो प्रचलित धर्मो को अन्धविश्वाश या रूढ़िवाद मानते हैं |

इस धर्म को अपनाने में भी अनेक समस्याएं आती हैं | यह 'मानववादी धर्म' सिर्फ बौद्धिक वर्ग को संतुष्ट कर सकता है किसी धार्मिक वर्ग के व्यक्ति को नहीं संतुष्ट कर सकता है | वास्तव में धर्म से व्यक्ति का भावनात्मक जुड़ाव होता है, यह व्यक्ति के जन्म के साथ ही विकसित होता है | धर्म के कर्मकांडों के पालन में ही व्यक्ति को संतुष्टि मिलती है | मनुष्य वाह्य रूप से किसी नूतन धर्म को भले ही स्वीकार कर ले, पर आंतरिक रूप से वह इस नवीन धर्म से

नहीं जुड़ सकता है | यह 'मानववादी धर्म' आध्यत्मिक वर्ग के लोगों को आंतरिक शान्ति नहीं प्रदान कर सकता है |

अंततः चौथे विकल्प के रूप में हमारे समक्ष यही विकल्प बचता है कि हम धर्मो कि विविधता को ही स्वीकार करें | इस संसार में विभिन्न धर्म और प्रकृति के लोग हैं, जिनकी अपनी - अपनी श्रद्धा है, वास्तव में विविधता में ही सुंदरता है | हमें सभी के धर्मों का आदर करना चाहिए | सिर्फ मेरा ही धर्म श्रेष्ठ है और अन्य धर्म असत्य हैं ऐसा विचार उचित नहीं है | गांधी जी ने कहा है कि यद्यपि प्रत्येक धर्म सत्य हैं, परन्तु अपनी मानवीय बुद्धि पर आधारित होने के कारण सभी धर्म सामान रूप से अपूर्ण भी हैं, क्योंकि मानवीय बुद्धि की अपनी एक सीमा है | गाँधी जी के शब्दों में - "[17]मेरे विचार में विभिन्न धर्म एक ही उद्यान के सुंदर फूल हैं तथा एक ही महाबृक्ष की विभिन्न शाखाएं हैं, अतः वे समान रूप से सत्य हैं, परन्तु वे समान रूप से अपूर्ण भी हैं ; क्योंकि मनुष्य ही उन्हें ग्रहण करते हैं और उनकी व्याख्या करते हैं |" इसी तरह से शिकागो के धर्म सम्मलेन में स्वामी विवेकानंद ने कहा कि सत्य सदैव सार्वभौमिक ही होता है | यदि कोई यह दावा करे कि केवल मेरे हाँथ में छह अंगुलियां हैं और अन्य सभी के हाँथ में पांच तो यह नहीं सोचना चाहिए कि मेरा हाँथ प्रकृति का सच्चा रूप हैं, बल्कि यह सोचना चाहिए कि यह एक रोग विशेष हैं | यही बात धर्म के सम्बन्ध में भी लागू होती है | केवल एक ही धर्म सत्य है बाकी सभी असत्य तो तुम्हें यह कहने का अधिकार है कि वह एक धर्म कोई रोग विशेष है | यदि एक धर्म सत्य है तो अन्य धर्म सत्य होंगे ही |

विभिन्न पक्षों को देखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि वास्तव में किसी एक धर्म को सार्वभौम धर्म के रूप में नहीं अपनाया जा सकता है | सभी धर्मों के प्रति सद्भाव रखना ही सर्वोच्च विचार है| 'सद्भाव' का तात्पर्य है कि हमें अन्य धर्मों के प्रति घृणा या द्वेष का भाव नहीं रखना चाहिए | अपने धर्म के साथ - साथ हमें अन्य धर्मों का भी सम्मान करना चाहिए | गाँधी जी के अनुसार - "[18] मैं सर्वप्रथम समत्व में विश्वास करता हूँ, जिसका अभिप्राय है अभी आस्थाओं एवं पंथों के प्रति समान आदर | समान आदर का तात्पर्य यह नहीं है कि तुम्हें अन्य धर्मों के विचारों को स्वीकार कर लेना चाहिए बल्कि समान आदर दूसरों के विचारों को समझने के लिए बाध्य करता है, हम उस दृष्टिकोण की प्रसंसा करते हैं जिसके परिप्रेक्ष्य में वे अपने धर्म को देखत हैं | इसका अभिप्राय है कि हमें भेद बिंदुओं की अपेक्षा सहमति के बिंदुओं पर ही अधिक बल दें चाहिए|"

वर्तमान की जो समस्याएं धर्म में भेद के कारण उत्पन्न हो रही हैं उन सैद्धांतिक मतभेदों को हम बातचीत के माध्यम से सुलझाकर विभिन्न धर्मों के बीच एकता और सामंजस्य की स्थापना कर सकते है, यही सर्वधर्म सद्भाव है और यही वर्तमान युग की अपरिहार्य आवश्यकता है |

सन्दर्भ- ग्रंथसूची

1. ऋषिकांत पांडेय (२०१६); 'धर्म दर्शन' पृ. ३९८
2. स्वामी विवेकानंद (१९६१); 'ज्ञानयोग', अद्वैत आश्रम, कलकत्ता, पृ. ३७३
3. ऋषिकांत पांडेय (२०१६); 'धर्म दर्शन' पृ. ३९८
4. एन. ऍफ़ .एस.फरे, ' रीजन इन रिलीजन', पृ . ६७
5. जी. गैलोव (१९६०); 'फिलॉसफी ऑफ़ रिलीजन' पेज १४६-१४७
6. डब्ल्यू. ई. हॉकिंग (१९५५-५६); ' क्रिश्चियैनिटी एंड दी फेथ ऑफ़ दी कमिंग सिविलाइज़ेशन', 'हिबर्ट जर्नल', वॉल्यूम ५४, पृ. ३४६
7. फैड्रिक हीलर, 'हाउ कैन क्रिश्चियन एंड नान-क्रिश्चियन रिलीजंस, कॉ-ऑपरेट? 'हिबर्ट जर्नल', वॉल्यूम ५२ पृ. ११५
8. डॉ . एस . राधाकृष्णन (१९४७); 'रिलीगुण ऐंड सोसाइटी' पृ. -५४
9. डॉ . एस . राधाकृष्ण (१९५४); 'दी हिन्दू ब्यू ऑफ़ लाइफ', पृ. -२३
10. स्वामी विवेकनन्द स्पीचेस - ' दी वर्ल्ड पार्लियामेंट ऑफ़ रिलीजन' शिकागो
11. भगवान दास (१९३९); 'दी इसेंशियल यूनिट ऑल रिलीजंस' पृ .५७
12. आइबिड, पृ. -६३
13. महात्मा गाँधी (१९६२); "ऑल रिलीजंस आर टू ", एडी.बाई आनंद टी. हिंगरोनी, पृ. -२१
14. डॉ . एस . राधाकृष्ण (1956); 'रिकवरी ऑफ़ फेथ', पृ.-१८८-८९
15. 'दी कम्प्लीट वर्क्स ऑफ़ स्वामी विवेकानंद' पृ. -३९०
16. 'किंग जेम्स बाइबिल', १४:६
17. 'महात्मा गाँधी', 'हरिजन', पृ.३०.१.३७
18. महात्मा गाँधी(१९६२); ' ऑल रिलीजन आर टू', ' एडी. बाई आनंद टी.हिंगरोनी, पृ. -७